International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 10 Issue 4 Ser. II || April 2021 || PP 60-63

वेदों में निरूपित जल संसाधनों की महत्ता एवं उनका संरक्षण

अमित कुमार[1]। कृष्ण कुमार शर्मा [2]।

[1]*सहायक आचार्य (भूगोल), राजकीय महाविद्यालय, भादरा, जिला हनुमानगढ़, राजस्थान, भारत*
[2]*सहायक आचार्य (संस्कृत), राजकीय महाविद्यालय, भादरा, जिला हनुमानगढ़, राजस्थान, भारत*

सारांश

जल पृथ्वी पर जीवन का आधार तत्त्व है। परंतु मनुष्य की अदूरदर्शिता और 'तथाकथित' विकास की अवधारणा ने इस आधार तत्त्व को अपने प्राकृतिक रूप में सुरक्षित एवं संरक्षित नहीं रहने दिया है, परिणामस्वरूप आज विश्व जल संकट का सामना कर रहा है। जल की अशुद्धता एवं अल्पता के चलते भविष्य में युद्ध की संभावना तक व्यक्त की जा रही है। ऐसे में भावी पीढ़ियों और जीव–जगत् के हितार्थ जल संसाधनों की महत्ता को देखते हुए इनका संरक्षण एवं इनकी शुद्धता बनाये रखना नितांत आवश्यक हो गया है। भारतीय चिंतन 'जलमेव जीवनम्' अर्थात् जल को जीवन मानकर इसके सभी स्वरूपों के संरक्षण की पहल करता है। भारत में अनेक परंपराएं एवं संस्कार जल संरक्षण पर आधारित थे। जल स्रोतों को पवित्र मानकर उनकी सुरक्षा एवं पूजा की जाती रही है। वैदिक साहित्य में भी जल अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्त्व के रूप में विवेचित है। ऋग्वेद से प्रारंभ करके पश्चात्वर्ती वेद संहिताओं, यथा यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद में यत्र–तत्र जल की महत्ता एवं संरक्षण के उद्धरण मिल जाते हैं। इनमें अनेक आपः (जल देवता) या जल सूक्त विद्यमान हैं। वेदों में चित्रित मानव समाज जल की महत्ता से अवगत तथा जल संरक्षण के प्रति सचेत है। आज जब मानवीय गतिविधियों से जल संसाधन निरंतर दूषित होते जा रहे हैं, तो ऐसे में वेदों में जल संसाधनों हेतु अभिव्यक्त संरक्षणकारी एवं कल्याणकारी दृष्टिकोण पर मंथन करने और इसे व्यावहारिक जीवन में आत्मसात् करने से जल संरक्षण की दिशा में सकारात्मक दृष्टि प्राप्त होगी तथा हम अपने वास्तविक हितों की ओर अग्रसर हो सकेंगे।

बीज शब्द : *जल संकट, 'तथाकथित' विकास, भारतीय चिंतन, संस्कार, जल संरक्षण, सूक्त, संरक्षणकारी दृष्टिकोण, कल्याणकारी दृष्टिकोण, सृष्टि, स्वच्छ जलीय संसाधन, प्रदूषण, 'शून्य जल' स्तर ('डे ज़ीरो'), जलवायु परिवर्तन, हिमनद, सभ्यता, पंचमहाभूत, पारिस्थितिक एवं पर्यावरण संतुलन, वैदिक चिंतन, प्राकृतिक पर्यावरण, मरुभूमि, शाद्वल प्रदेश, अनूप क्षेत्र, भूमिगत जल, वृष्टि, वैदिक वाङ्मय।*

परिचय

यह विरोधाभास ही है कि 'जलीय ग्रह' पृथ्वी पर आज हम जल संकट का सामना कर रहे हैं। मनुष्य की अदूरदर्शिता और 'तथाकथित' विकास की अवधारणा ने सृष्टि के आधार तत्त्व जल को अपने मूल प्राकृतिक रूप में सुरक्षित एवं संरक्षित नहीं रहने दिया है। उपयोग योग्य स्वच्छ जलीय संसाधन मानव के अविवेकपूर्ण दोहन से अवक्रमित हो रहे हैं तथा हमारे अनावश्यक हस्तक्षेप से कई जलस्रोत विलुप्ति के कगार पर हैं। पवित्र माने जाने वाली जीवनदायिनी नदियाँ भयंकर प्रदूषण का शिकार हैं तो वहीं दूसरी ओर वृहद् जलराशियाँ मानवीय कचरे को वहन कर रही हैं। दुनिया के कतिपय बड़े शहरों में 'शून्य जल' स्तर ('डे ज़ीरो') की स्थितियाँ बन रही हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण हिमनद पिघल रहे हैं। आगामी समय में जल की अशुद्धता एवं अल्पता के चलते युद्ध की संभावना तक व्यक्त की जा रही है। ऐसे में भावी पीढ़ियों और जीव–जगत् के हितार्थ जल संसाधनों की महत्ता को देखते हुए इनका संरक्षण एवं इनकी शुद्धता बनाये रखना अपरिहार्य हो गया है।

विवेचन

जीवन की अनिवार्यताओं में जल भी एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसके बिना पृथ्वी पर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। भारत में सभ्यता के उदयकाल से ही जल संसाधनों के प्रति संरक्षणकारी एवं कल्याणकारी भावना हावी रही है। प्रारंभ से ही जगत् के मूलाधार– पंचमहाभूतों, यथा क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा की शुद्धता पर बल दिया

गया ताकि पारिस्थितिक एवं पर्यावरण संतुलन न बिगड़े[1]। भारतीय चिंतन में 'जलमेव जीवनम्' अर्थात् जल को जीवन मानकर इसके सभी स्वरूपों के संरक्षण की पहल की गयी है। भारत में अनेक परंपराएं एवं संस्कार जल संरक्षण पर आधारित थे। जल स्रोतों को पवित्र मानकर उनकी सुरक्षा एवं पूजा की जाती रही है। पृथ्वी और जल (नदियों) दोनों से वनस्पतियों एवं पशुओं का संपोषण होता था, इसीलिये इन्हें माता का दर्ज़ा दिया गया[2]।

वैदिक साहित्य में भी जल अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्त्व के रूप में निरूपित है। *ऋग्वेद* से प्रारंभ करके पश्चात्वर्ती वेद संहिताओं, यथा *यजुर्वेद, सामवेद* एवं *अथर्ववेद* में यत्र–तत्र जल की महत्ता एवं संरक्षण के उद्धरण मिल जाते हैं। इनमें अनेक आपः (जल देवता) या जल सूक्त विद्यमान हैं। *ऋग्वेद* में जल को पृथ्वी का सुस्वादु, सुअमृत तथा ऋतछंद का विमल बिंब माना गया है। वैदिक मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने जल को 'आपोज्योतीरसोऽमृतम्' अर्थात् ज्योति, रस और अमृत कहकर इसकी दैवीय स्वरूप में स्तुति की है। *ऋग्वेद* में चार[3] तथा *अथर्ववेद* में नौ प्रकार[4] के जलों का उल्लेख है। वैदिक चिंतन में 'ओ३म् यन्तु नद्यो वर्षन्तु पर्जन्या' अर्थात् नदियाँ बहें और बादल पर्याप्त वर्षा करें जैसे कई आह्वान दृष्टिगोचर होते हैं। वेदों में चित्रित मानव समाज जल की महत्ता से अवगत तथा जल संरक्षण के प्रति सजग है।

अथर्ववेद में प्राकृतिक पर्यावरण में मुख्यतः तीन तत्त्वों, यथा जल, वायु एवं औषधि (वनस्पति) की महत्ती भूमिका को दर्शाया गया है। ये प्रकृति और दिव्यता के तीन आनंददायी उपहार माने गये हैं –

''त्रीणिछन्दांसि कवयो वि येतिरे पुरुरूपं दर्शतं विश्वचक्षणम्।
आपो वाताओषधयस्तान्येकस्मिन्भुवन आर्पितानि।।''[5]

विभिन्न मंत्रों में जल की महत्ता या शुद्धता को इंगित करते हुए इसे अमृत एवं औषधि का स्रोत, रोगनाशक तथा कल्याणकारी माना गया है –

''अप्स्व१न्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये।''[6]

''अप्स्व१न्तरमृतमप्सु भेषजम्।''[7]

''अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा।
अग्निं च विश्वशम्भुवमापश्च विश्वभेषजीः।।''[8]

''आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे३ मम।''[9]

''यत्सिन्धौ यदसिन्क्यां यत्समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः।''[10]

''तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः।।''[11]

''अपो याचामि भेषजम्।।''[12]

''आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः।
आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्त्वा मुञ्चन्तु क्षेत्रियात्।।''[13]

''इमा आपः प्र भराम्ययक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः।
गृहानुप प्र सीदाम्यमृतेन सहाग्निना।।''[14]

'आपो भद्रा'[15]।

जल की स्तुति करते हुए कहा गया है कि दिव्य गुणों वाला जल हमारी अभीष्ट सिद्धि एवं पीने के लिये सुखदायी होवे तथा हमारे रोगों के शमन एवं भविष्य में संभावित रोगों के भय का निवारण करने के लिये हमारी ओर प्रवाहित होवे –

''शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शं योरभि स्रवन्तु नः।।''[16]

इसी प्रकार भूमि सूक्त में जल के स्वास्थ्यवर्धक एवं रोगनाशक होने की कामना करते हुए कहा गया है कि शुद्ध जल हमारे शरीर के लिये बहे –

'शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु'[17]।

वास्तव में स्वस्थ शरीर के लिये जल की शुद्धता बनाये रखना अत्यंत आवश्यक है।

विविध प्रकार के जलों, यथा मरुभूमि के शाद्वल प्रदेशों के जल, अनूप क्षेत्रों के जल, कूपादि के भूमिगत जल, कुंभ में भरकर रखे हुए जल तथा वृष्टि जल के मनुष्य के लिये शांतिदायक एवं कल्याणप्रद होने की कामना की गयी है –

''शं न आपो धन्वन्याः शमु सन्त्वनूप्याः।
शं न खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः।
शिवा नः सन्तु वार्षिकीः।।''[18]

विश्वमंगलकामना के निमित्त समुद्रों एवं जल के मनुष्य के लिये सुखकर होने की प्रार्थना की गयी है –
'शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः'[19]।

ऋग्वेद के दसवें मंडल का 75वाँ सूक्त 'नदी सूक्त' कहलाता है। इस सूक्त के विभिन्न मंत्रों में नदियों के ही वर्णन हैं। वैदिक साहित्य में इस मंडल के अतिरिक्त दूसरे मंडलों में तथा आरण्यक ग्रंथों और उपनिषदों में बहुत–सी नदियों के वर्णन हैं।[20] नदी सूक्त के एक मंत्र में गंगा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्री (सतलज), परुष्णी (रावी), असिक्नी (चेनाब), मरुद्वृधा, वितस्ता (झेलम), आर्जिकीया या विपासा (व्यास), सुषोमा नदियों से हितकारी होकर जल प्रदान करने का आह्वान किया गया है –

''इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिकन्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया।।''[21]

जल संकट के समाधान हेतु उपयोग योग्य स्वच्छ जल की शुद्धता को बनाये रखना तथा जल संसाधनों का संरक्षण नितांत आवश्यक है। ऋग्वेद में मानव को सचेत करते हुए कहा गया है कि यह द्यौ, भूमि, अंतरिक्ष में उत्पन्न होने वाली सृष्टियाँ, जल इत्यादि एक बार ही उत्पन्न होता है, पुनः पुनः नहीं –

''सकृद्ध द्यौरजायत सकृद्भूमिरजायत।
पृश्न्या दुग्धं सकृत्पयस्तदन्यो नानु जायते।।''[22]

जल संरक्षण को दृष्टिगत रखते हुए मनुष्य को जल स्रोतों को हानि न पहुँचाने, उन्हें प्रदूषित न करने के निर्देश दिये गये हैं ताकि ये समस्त प्राणियों को सतत रूप से प्राप्त होते रहें –

'मापो मौषधीर्हिंसीः'[23]।

निष्कर्ष

इस प्रकार पूर्वोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि वैदिक वाङ्मय में जल संसाधनों की महत्ता का महिमामंडन कर इनकी निर्मलता एवं संरक्षण को उचित स्थान दिया गया है। आज जब मानवीय गतिविधियों से जल संसाधन निरंतर दूषित होते जा रहे हैं, तो ऐसे में वेदों में जल संसाधनों हेतु अभिव्यक्त संरक्षणकारी एवं कल्याणकारी दृष्टिकोण पर मंथन करने और इसे व्यावहारिक जीवन में आत्मसात् करने से जल संरक्षण की दिशा में सकारात्मक दृष्टि प्राप्त होगी तथा मानव समुदाय अपने वास्तविक हितों की ओर अग्रसर हो सकेगा।

संदर्भ

1. अमित कुमार – ''भारतीय मूल्य प्रणाली में सतत विकासः एक विवेचन'', *इंटरनेशनल एज्युकेशनल सांटिफिक रिसर्च जर्नल*, वो. 5, इश्यू 12, दिसंबर 2019, पृ. 65.

2. रामशरण शर्मा – *प्रारंभिक भारत का परिचय*, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्रा. लि., नई दिल्ली, प्रथम ओरियंट ब्लैकस्वॉन संस्करण–2009, पुनर्मुद्रण–2020, पृ. 44.

3. *ऋग्वेद* 7 / 49 / 2

4. *अथर्ववेद* 1 / 6 / 4 इत्यादि मंत्र

5. *अथर्ववेद* 18 / 1 / 17

6. *ऋग्वेद* 1 / 23 / 19

7. *यजुर्वेद* 9 / 6; *अथर्ववेद* 1 / 4 / 4

8. *ऋग्वेद* 1 / 23 / 20

9. *ऋग्वेद* 1 / 23 / 21

10. *ऋग्वेद* 8 / 20 / 25

11. *ऋग्वेद* 10 / 9 / 3

12. *अथर्ववेद* 1 / 5 / 4

13. *अथर्ववेद* 3 / 7 / 5

14. *अथर्ववेद* 3 / 12 / 9

15. *अथर्ववेद* 3 / 13 / 5

16. *ऋग्वेद* 10 / 9 / 4; *अथर्ववेद* 1 / 6 / 1; *यजुर्वेद* 36 / 12

17. *अथर्ववेद* 12 / 1 / 30

18. *अथर्ववेद* 1 / 6 / 4

19. *ऋग्वेद* 7 / 35 / 8

20. एस. डी. कौशिक – *भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितंत्र*, रस्तोगी पब्लिकेशंस, मेरठ, अष्टम संस्करण, सप्तम पुनर्मुद्रण–2007, पृ. 109.

21. *ऋग्वेद* 10 / 75 / 5

22. *ऋग्वेद* 6 / 48 / 22

23. *यजुर्वेद* 6 / 22